कबीर का संदेश : शब्दों में नहीं, अनुभव में खोजो सत्य

कबीर का संदेश अत्यंत सरल है—सत्य को शब्दों में कैद करने का प्रयास मत करो, उसे अनुभव करो. अहंकार का त्याग करो, विनम्रता को अपनाओ और अपने हृदय को निर्मल बनाओ. जब मनुष्य अपनी सीमाओं को स्वीकार करता है, तभी वह अनंत की यात्रा पर आगे बढ़ पाता है.

डॉ. मुकेश नायक

भारतीय संत परंपरा में संत कबीर का स्थान अत्यंत विशिष्ट है. उन्होंने जीवन, ईश्वर और आत्मा से जुड़े गहनतम प्रश्नों को सहज और सरल भाषा में व्यक्त किया. उनका प्रसिद्ध दोहा—

'भारी कहूँ तौ बहु डरूँ, हलका कहूँ तौ झूठ.
मैं का जानूँ राम कूँ, नैनों कबहूँ न दीठ॥'

केवल एक काव्य-पंक्ति नहीं, बल्कि गहन आध्यात्मिक दर्शन का सार है. इस दोहे में कबीर उस परम सत्य की चर्चा करते हैं जिसे शब्दों की सीमाओं में बाँधा नहीं जा सकता. वे स्वीकार करते हैं कि ईश्वर इतना व्यापक और असीम है कि उसका कोई भी वर्णन उसे पूर्णत: व्यक्त नहीं कर सकता.

कबीर कहते हैं कि यदि वे ईश्वर को 'भारी' या महान कहें, तो कहीं न कहीं उसकी अनंतता को सीमित करने का भय है. यदि उसे 'हलका' या तुच्छ कहें, तो वह असत्य होगा. इसलिए वे विनम्रता के साथ स्वीकार करते हैं कि जिस परम सत्ता को उन्होंने अपनी आँखों से नहीं देखा, उसके बारे में अंतिम सत्य का दावा कैसे कर सकते हैं.

यह दृष्टिकोण वेदांत और उपनिषदों की उस परंपरा से गहराई से जुड़ा है, जिसमें ब्रह्म को 'अनिर्वचनीय' कहा गया है—अर्थात् जिसे शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता. परम सत्य सभी सीमाओं, अवधारणाओं और परिभाषाओं से परे है. मनुष्य जितना उसे परिभाषित करने का प्रयास करता है, उतना ही अनुभव करता है कि वह हर कल्पना और विचार से परे है.

यह दोहा विनम्रता का भी महत्वपूर्ण संदेश देता है. मनुष्य अक्सर अपने ज्ञान, उपलब्धियों और अनुभवों पर गर्व करने लगता है. उसे लगता है कि वह संसार और उसके रहस्यों को पूरी तरह समझ चुका है. कबीर इस अहंकार को चुनौती देते हुए कहते हैं कि जब स्वयं परम सत्य को पूर्ण रूप से समझना संभव नहीं, तब कोई व्यक्ति संपूर्ण ज्ञान का दावा कैसे कर सकता है?

वास्तविक ज्ञान वहीं से प्रारंभ होता है जहाँ अहंकार समाप्त होता है. जब मनुष्य यह स्वीकार करता है कि अभी बहुत कुछ जानना शेष है, तभी उसके लिए सच्ची समझ के द्वार खुलते हैं. कबीर का 'मैं का जानूँ' अज्ञान की स्वीकारोक्ति नहीं, बल्कि बौद्धिक और आध्यात्मिक विनम्रता की अभिव्यक्ति है. यही भाव गहन ज्ञान की ओर ले जाता है.

कबीर का संदेश जीवन के प्रति संतुलित दृष्टिकोण अपनाने की प्रेरणा भी देता है. मनुष्य अक्सर अपनी धारणाओं के आधार पर वस्तुओं और परिस्थितियों का मूल्यांकन करता है. किसी को अत्यधिक महत्व देता है और किसी को पूरी तरह निरर्थक मान लेता है. कबीर संकेत करते हैं कि सत्य इन दोनों अतियों से परे है.

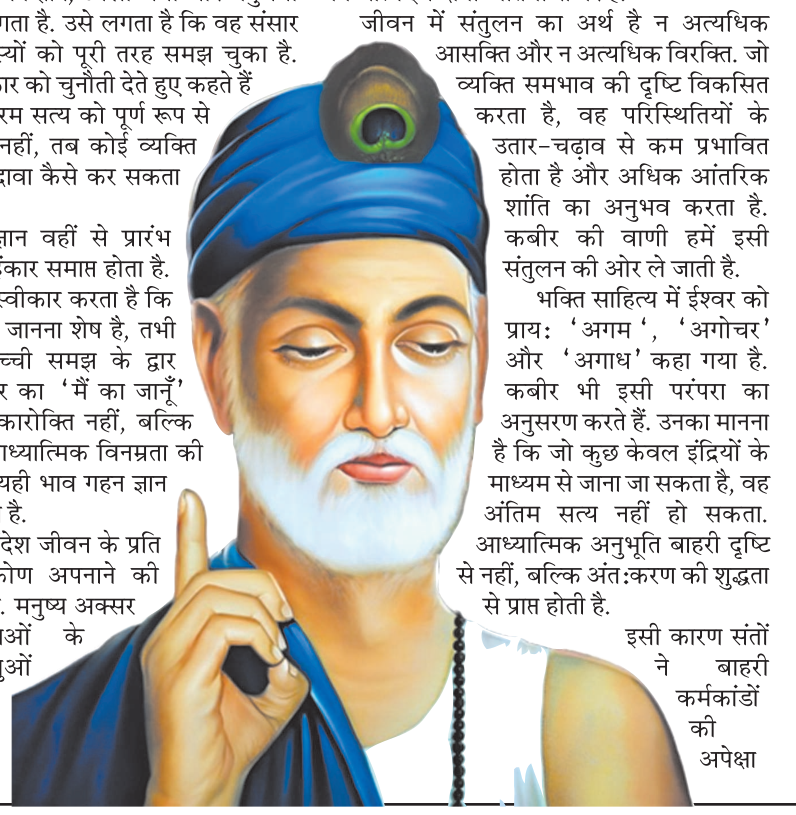

जीवन में संतुलन का अर्थ है न अत्यधिक आसक्ति और न अत्यधिक विरक्ति. जो व्यक्ति समभाव की दृष्टि विकसित करता है, वह परिस्थितियों के उतार-चढ़ाव से कम प्रभावित होता है और अधिक आंतरिक शांति का अनुभव करता है. कबीर की वाणी हमें इसी संतुलन की ओर ले जाती है.

भक्ति साहित्य में ईश्वर को प्राय: 'अगम', 'अगोचर' और 'अगाध' कहा गया है. कबीर भी इसी परंपरा का अनुसरण करते हैं. उनका मानना है कि जो कुछ केवल इंद्रियों के माध्यम से जाना जा सकता है, वह अंतिम सत्य नहीं हो सकता. आध्यात्मिक अनुभूति बाहरी दृष्टि से नहीं, बल्कि अंत:करण की शुद्धता से प्राप्त होती है.

इसी कारण संतों ने बाहरी कर्मकांडों की अपेक्षा आंतरिक परिवर्तन पर अधिक बल दिया. मंदिर, मस्जिद, तीर्थयात्राएँ और पूजा-पद्धतियाँ तभी सार्थक हैं जब उनके साथ हृदय की निर्मलता जुड़ी हो. यदि मन अहंकार, लोभ और द्वेष से भरा रहे, तो ईश्वर का अनुभव दूर ही रहता है.

कबीर का यह दोहा भक्ति और ज्ञान का अद्भुत समन्वय प्रस्तुत करता है. एक ओर वे ईश्वर की महिमा स्वीकार करते हैं, वहीं दूसरी ओर मानव बुद्धि की सीमाओं को भी पहचानते हैं. श्रद्धा और विनम्रता का यही संतुलन सच्ची आध्यात्मिकता की पहचान है. सच्चा भक्त स्वयं का महिमामंडन नहीं करता, बल्कि अपने से कहीं बड़ी सत्ता के समक्ष समर्पित हो जाता है.

यह शिक्षा केवल आध्यात्मिक जीवन तक सीमित नहीं है, बल्कि दैनिक जीवन में भी उतनी ही प्रासंगिक है. जब व्यक्ति स्वयं को सबसे अधिक ज्ञानी, सक्षम या महत्वपूर्ण समझने लगता है, तब संघर्ष और अशांति उत्पन्न होती है. इसके विपरीत, विनम्रता सम्मान दिलाती है, मानवीय संबंधों को मजबूत बनाती है और सामाजिक सौहार्द को बढ़ावा देती है.

कबीर यह भी स्मरण कराते हैं कि जीवन का वास्तविक उद्देश्य केवल भौतिक उपलब्धियाँ प्राप्त करना नहीं है. मनुष्य का बड़ा दायित्व अपने भीतर स्थित सत्य को खोजना है. संसार की हर वस्तु परिवर्तनशील है, किंतु आत्मा और परमात्मा का संबंध शाश्वत है. जो इस सत्य को समझ लेता है, उसे स्थिरता, शांति और संतोष प्राप्त होता है.

कबीर का यह अमर दोहा केवल आध्यात्मिक चिंतन नहीं, बल्कि जीवन जीने की एक कला है. यह हमें सिखाता है कि जो वास्तव में महान है, उसे शब्दों में पूरी तरह व्यक्त नहीं किया जा सकता. उसे केवल श्रद्धा, अनुभव और आत्मबोध के माध्यम से जाना जा सकता है. यही कबीर की वाणी का सार है और यही मानव जीवन की सर्वोच्च साधनाओं में से एक है.

स्त्री की त्रासदी से मुक्ति के लिए कामना की कहानियां

इक्कीसवाँ मिनट
(कहानी संग्रह)
संतोष श्रीवास्तव
कीमत -300 रुपए
अद्विक प्रकाशन, नई दिल्ली

डॉ. दुर्गा सिन्हा 'उदार'

पुस्तक समीक्षा

साहित्यकार संतोष श्रीवास्तव के कहानी संग्रह 'इक्कीसवाँ मिनट' में शामिल चौदह कहानियाँ अपने अनूठे विषय प्रसंगों, अभिनव घटनाओं और चुटीले संवादों से न केवल पाठकों का ध्यान खींचती हैं वरन पाठकों को अपने साथ बाँधे रखती हैं.रोचकता व नवीनता के साथ इनकी भाषा-शैली इतनी सरल व सहज है कि मन पर अपनी छाप छोड़ जाती हैं.हर कहानी अलग कथ्य व शिल्प से सजी नवीन विषय और नए परिवेश की रोचक घटनाओं का समुच्चय है.

जीवन के नए आयाम का परिदृश्य पाठकों की कल्पनाशीलता को एक वृहत् आकाश प्रदान करता है. समस्याएं हैं तो उनके समाधान भी हैं.

शीर्षक कहानी 'इक्कीसवाँ मिनट' वर्तमान समय को सामने लाती है. आज का युवा पुरानी पीढ़ी से सीधे हटने की मांग कर बैठता है-

'तुम हटो... हमें आगे आना है...' वह प्रतीक्षा नहीं करता. समय बदला है समय की मांग बदली है. यह वाक्य भी उसूलों के पक्के इंसान का व्यक्तित्व दर्शाते हैं- 'मैं काम करने के पैसे लेता हूँ काम छोड़ने की रिश्वत नहीं' कथ्य-शिल्प और अभिव्यक्ति पर खरी उतरती कहानी लगती है. भाषा सरल-सहज सार्थक संदेश संम्प्रेषण करता है. इतना सजीव और मार्मिक चित्रण लेखक के परकीय प्रवेश से ही संभव है. खुद को परिस्थितियों के अनुकूल ढालना सब के बस की बात नहीं' बहुत सही कहा आपने.

इसी तरह विस्थापन की त्रासदी दर्शाती 'क से कश्मीर' कहानी वास्तविकता से रूबरू कराती है.आतंकी जेहादियों की कहर बरसाती गोलियाँ, निर्दोष हिन्दू मुस्लिमों की हत्या. ओह! कितनी क्रूरता. खून की होली खेलता आदमी. 'धर्म की लड़ाई' ? धर्म लड़ाता भी है? 'जोखिम' कहानी में बेकसूर मज़दूर सीताराम उन सब भूमिका में हैं जिन्हें अनावश्यक ही फँसा कर पकड़ा और मारा जाता है. खुद की क़मीज़ पर सफलता का तमग़ा लगाने की लालसा में एक निर्दोष मेहनतकश इन्सान की बलि चढ़ा देना यथार्थ को आईना दिखाती कहानी.

'मोह भंग' धर्म के नाम पर पनपते घोर अधर्म का पर्दाफाश करती कहानी है जो उस कड़वे सत्य को उजागर करती है जिसे कभी स्वीकारने का मन नहीं करता. वर्तमान तो कलियुग कहलाता है किन्तु यह सत्य तो हर युग का सत्य है. 'ये इश्क़ नहीं आसाँ' पढ़ते हर डी.एच.लॉरेंस का कथन याद आता है कि 'मैरिज इज़ ए लीगल प्रॉस्टीट्यूशन' कितना सही है लगता है. जहाँ स्त्री केवल देह मात्र समझी जाती है. मुक्ति की कामना तो करेगी ही.

'पद्मश्री' कहानी इंसान के उड़ान के पंखों को बीच में ही कतर देने का एक कड़वा सच है. जिसे झेलना स्त्री के ही हिस्से में क्यों आता है ? पुरुष तो दूसरे उपाय ढूँढ लेता है कहीं रुकावट नहीं महसूस करता. क्यों स्त्री की ही सारी जवाबदारी बन जाती है? यह कहाँ का नियम है? किसने गढ़े हैं ये नियम ? इसके उलट भी तो होना चाहिए कभी. हमारी लेखनी भी तो समाज के नियमों के अधीन ही चलती है. उस व्यवस्था को तोड़ कहाँ पाती है. कोई नया पैमाना कहाँ निर्धारित कर पाती है?

स्त्री की त्रासदी की जीवंत तस्वीर उकेरती हर कहानी अपने आप में बहुत कुछ कहने, सहने और बदलने की दिशा का निर्देश करती है. ये कहानियाँ जीवन की सच्चाई का बयान करती हैं. अनेकों प्रश्न हैं जिनके समाधान की, मुक्ति की कोई राह भी नहीं दिखती. उसे उसी तरह हर बार जीने को विवश ज़िन्दगी भी अपनी गति से चलती ही रहती है.

'इक्कीसवाँ मिनट' संग्रह हर पाठक के हृदय को आलोड़ित करने वाला संग्रह है.

क्लास by बड़े भाई

सीखेंगे तो तब, जब..

संदीप द्विवेदी
कवि/प्रेरक वक्ता/स्किल ट्रेनर

मैं जब भी कहीं अपने सत्र लेने जाता हूँ तो वहां के पदाधिकारियों के साथ लंच या डिन्नर का अवसर कभी नही छोड़ता क्योंकि यहाँ पर हम कुछ चर्चाएँ क्र लेटे हैं परिचय और गहरा हो जाता है.. कार्यक्रम पर प्रतिक्रिया पता चलती है जिससे मुहे बहुत कुछ सीखने को मिलता है.. तो ऐसे ही किसी सत्र में मेरा जान हुआ था उन सज्जन ने किसी चर्चा पर ही सीखने को लेकर बड़ी सुन्दर बात कही थी.. उन्होंने एक किस्सा बताया उन्होंने कहा एक इलेक्ट्रॉनिक आइटम सुधारने की दूकान थी..उनके पास एक लड़का रोज सीखने आता था.. वो दिन भर उनके पास बैठा रहता था.. उनकी दूकान के बगल से एक सब्जी की दूकान थी.. सब्जी के मालिक ने एक लडका सब्जी बेचने के काम पर रखा हुआ था.. लेकिन उस लड़के को इलेक्ट्रॉनिक कामों में बहुत रूचि थी..वह वही बैठे बैठे उस दुकानदार को काम करते देखता रहता था..

वो लड़का जो सीखने आता था वो कुछ भी नही सीख पाया..वो भी इतना बढिया ट्रेनर पाकर.. वहीँ वो लड़का जो सब्जी बेचने से समय चुराकर काम देखता था.. कुछ ही समय में एक बड़ा इलेक्ट्रीशियन बन गया और उसने कुछ ही समय में एक बड़ा कारोबार खोल लिया..

उन सज्जन ने आगे कहा कि यहाँ से एक सीखने वाली बात निकल कर आती है कि जिस काम में आपकी रूचि नही है उस काम की बारिकिया आप में कभी उतर ही नहीं पाएंगी कि आप उसके मास्टर हो जाओ.. वहीँ अगर रूचि है तो आपका थोडा देखना भी, थोडा अभ्यास भी आपको मास्टर बना देगा..

छोटे भाई, कितनी अच्छी बात थी न..

छोटे भाई, कहना यह चाहता हूँ कि यदि प्यास होगी तभी पानी पी पाएंगे अगर प्यास नही होगी तो पानी किसी काम का नही..

दिन भर कहीं बैठे रहने से कुछ नही होगा.. आपके पास ठोस वजह होनी चाहिए कि क्यों आपको अमुक काम सीखना है.. वजह जितनी ठोस होगी आप उतना ही जल्दी सीखेंगे..यानि सीखेंगे तब, जब उसको सीखने में रूचि होगी..धन्यवाद

एक पाती पापा के नाम

सुचिता सकुनिया

प्रिय पापा,
कहते हैं,
हर कहानी का एक नायक होता है.
मेरी कहानी में भी है...
फर्क बस इतना है कि
वो कभी मंच पर नहीं आया,
हमेशा परदे के पीछे खड़ा रहा.
आज आपकी नहीं,
आपके पीछे छूट गए उस व्यक्ति की बात करना चाहती हूँ,
जिसे दुनिया ने पिता कहा,
और जिसने धीरे-धीरे
खुद को भूलकर
हम सबको याद रखा.
बचपन में
मैंने आपको बस पापा की तरह देखा—
हर सवाल का जवाब,
हर डर का समाधान,
और हर मुश्किल से बड़ा.
पर आज सोचती हूँ...
क्या आपके भी कुछ सपने थे?
या फिर
हमारे सपनों को पूरा करते-करते
आपने अपने सपनों का हिसाब रखना ही छोड़ दिया?
मैंने कभी पूछा नहीं.
शायद इसलिए कि
बच्चों को पापा दिखाई देते हैं,
उनके भीतर का इंसान नहीं.
आज जब खुद को
कभी मुश्किलों में पाती हूँ,
या जीवन की दौड़ में थक जाती हूँ,
तो बरबस आपकी याद आ जाती है.
याद आता है
कैसे बचपन में
आपको संघर्षों के दौर से
मुस्कुराते हुए गुजरते देखा था.
तब समझ नहीं पाती थी
कि वह मुस्कान कितनी कीमती थी.
आज समझती हूँ—
वह मुस्कान खुशी की नहीं,
हौसले की थी.
उसने सिखाया कि
हालात चाहे जैसे भी हों,
हार मानना विकल्प नहीं होता.
आज समझती हूँ,
आपने मुझे चलना नहीं सिखाया था,
आपने मुझे
गिरकर फिर उठना सिखाया था.
आज जब आईने में
अपनी उम्र दिखने लगी है,
तब कहीं जाकर
आपके चेहरे की थकान
समझ आने लगी है.
शायद उम्र
समझ भी साथ लेकर आती है.
अब महसूस होता है—
आपने हमें सिर्फ जीवन नहीं दिया,
जीने का साहस भी दिया.
सिर्फ सपने नहीं दिए,
उन्हें पूरा करने का विश्वास भी दिया.
अगर समय को
कुछ पल के लिए रोक पाती,
तो आपसे बस इतना पूछती—
'पापा,
क्या आपने कभी
अपने लिए भी कुछ चाहा था?'
और फिर शायद
किसी जवाब की प्रतीक्षा किए बिना
आपका हाथ थाम लेती...
क्योंकि कुछ सवालों के जवाब
शब्दों में नहीं,
पूरी ज़िंदगी में छिपे होते हैं.

फादर्स डे पर कविताएं

पिता होते हैं महान

आशा जाकड़ 'आस'

पिता होते हैं महान.
समुद्र से गम्भीर हिम से अटल
दु:खों में होते कभी न विचल
ऊपर से कठोर अन्दर कोमल
हृदय से विशाल, मन के सरल
सिखाते त्याग बलिदान.
पिता होते हैं महान..

माँ धरा तो पिता आकाश
बच्चों का है आत्मविश्वास
माँ दीपक तो पिता प्रकाश
माँ जीवन पिता देता स्वाँस
अनेक गुणों की खान.
पिता होते हैं महान..

पिता मुख से बोलते नहीं
मन की बात जान लेते हैं.
बच्चों की हर ख्वाहिश को
पूरा करने की ठान लेते हैं
देते हैं अपूर्व ज्ञान .
पिता होते हैं महान ..

पिता होते हैं वेद - पुराण
करते संस्कार - निर्माण
बच्चों के सुख के लिए
चलते रहते अथक पाँव
हर मुश्किल आसाँ करते
नहीं देखते धूप और छाँव
करते श्रम का अनुदान.
पिता तुम हो महान ..

पिता गाइड है और रक्षक
आलोचक हैं तो प्रशंसक
व्यवस्थापक ,सुप्रबन्धक
दूरदर्शी और मार्ग दर्शक
बच्चों का हैं अभिमान
पिता होते हैं महान .

मेरे पिता : एक अधूरी ग़ज़ल नहीं, पूरा महाकाव्य

(श्रद्धेय श्री बद्रीश मिश्रा की स्मृति में)

डॉ. अमृता अवस्थी

कुछ लोग जीवन जी जाते हैं,
कुछ जीवन का अर्थ बता जाते हैं,
कुछ विरले ऐसे होते हैं,
जो स्वयं एक पाठ बन जाते हैं--
मेरे पिता ऐसे ही थे...
बेगम अख्तर की ग़ज़लों में,
मेहंदी हसन के सुर में थे,
शेर, ग़जल, साहित्य, इतिहास—
उनके जीवन के स्वर में थे।
सुरों से संस्कार तक का यह सफ़र--
मेरे पिता ऐसे ही थे...
गीता जिनकी ज्योति रही,
मानस जिनका मान रहा,
धर्म नहीं था केवल वाणी,
कर्म ही जिनका प्राण रहा।
विचार और व्यवहार का सुंदर समन्वय-
मेरे पिता ऐसे ही थे...
ऊँच-नीच का भेद न जाना,
सबको एक समान रखा,
अपने हिस्से धूप समेटी,
औरों को वरदान रखा।
स्वयं तपकर औरों को छाया देना--
मेरे पिता ऐसे ही थे...
कितनों की राहों में दीपक बन,
कितनों का संबल बनते थे,
गिरते हुए मन, टूटे सपनों को,
अपनेपन से चुनते थे।
दूसरों के लिए जीने का नाम ही जीवन है
मेरे पिता ऐसे ही थे...
पर दुनिया ने कब पहचाना,
निस्वार्थ हृदय की थाती को,
फिर भी वे हँसकर कहते थे—
मत तौलो नेकी की सौगातों को।
देकर भूल जाना ही जिनकी रीति थी--
मेरे पिता ऐसे ही थे...
'यह कलयुग नहीं, करयुग है,'
उनका जीवन मंत्र यही,
देकर भूलो, चलते जाओ,
नेकी से बढ़कर तंत्र नहीं।
कर्म ही पूजा, कर्म ही साधना--
मेरे पिता ऐसे ही थे...

कविता

पिता हमारा अभिमान हैं

पिता जीवन है, संबल है, शक्ति है
पिता सृष्टि के निर्माण की अभिव्यक्ति है

पिता उंगली पकड़े बच्चे का सहारा है
पिता कभी कुछ खट्टा, कभी खारा है

पिता पालन है, पोषण है, पारिवार का अनुशासन है
पिता धौंस से चलने वाला प्रेम का प्रशासन है

पिता रोटी है, कपड़ा है, मकान है
पिता छोटे से परिंदे का बड़ा आसमान है

पिता अपदर्शित अनन्त प्यार है
पिता है तो बच्चों को इंतजार है

पिता से ही बच्चों के ढेर सारे सपने हैं
पिता है तो बाज़ार के सब खिलौने अपने हैं

पिता परमात्मा की जगत के प्रति आसक्ति है
पिता गृहस्थ आश्रम में उच्च स्थिति की भक्ति है

पिता अपनी इच्छाओं का हनन और परिवार की पूर्ति है
पिता रक्त में दिये हुए संस्कारों की मूर्ति हैपरिवार

पिता एक जीवन को जीवन का दान है
पिता दुनिया दिखाने का अहसान है

पिता सुरक्षा है, सिर पर हाथ है
पिता नहीं तो बचपन अनाथ है

तो पिता से बड़ा तुम अपना नाम करो
पिता का अपमान नहीं, उन पर अभिमान करो

संपादकीय बोर्ड | प्रबंध संपादक : सुमीत माहेश्वरी, समूह संपादक : क्रांति चतुर्वेदी